रामधारी सिंह दिनकर की रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना

डॉ. निशु सिंहा

अतिथि शिक्षिका, टी.पी.एस कॉलेज, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना।

शोध सार

राष्ट्रकवि दिनकर की चेतना महान है, वे संवेदनाओं एवं संचेतनाओं के साहित्यकार हैं। हमारे देश में तो यह राष्ट्रीय चेतना वैदिक काल से ही साहित्य में परिलक्षित होती रही है। दिनकर जी राष्ट्रीयता पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण का विकास ही नहीं अपितु विडंबनाओं, विसंगतियों और अंतर्विरोधों के परिणामस्वरूप सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और अस्पृश्यता से लोहा लेते हुए ब्रिटिश साम्राज्यवाद को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहती है। दिनकर की राष्ट्रीय चेतना में जितना कर्म के चिंतन पर बल है, उतना ही व्यक्ति के स्वाभिमान पर। उनके काल ने समय-समय पर भारतीय युग चेतना को राष्ट्र की अस्मिता के प्रति उद्वेलित किया है।

शब्द कुँजी :- राष्ट्रीय चेतना, पुनरुत्थानवादी, नवजागरण, राष्ट्रवाद

Received : 20/11/2025 https://doi.org/10.5281/zenodo.18259001 Acceptance : 31/11/2025

प्रस्तावना

रामधारी सिंह दिनकर का जन्म 23 सितम्बर 1908 को बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया गाँव में हुआ था। मोकामा घाट के एक स्थानीय विद्यालय में आरंभिक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् उन्होंने पटना विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा उत्तीण की। विद्यार्थी जीवन में इतिहास, राजनीति एवं दर्शनशास्त्र दिनकर जी के पसंदीदा विषय थे। उन्हें हिंदी, संस्कृत, मैथिली, बांग्ला, उर्दू एवं अंग्रेजी साहित्य में भी गहन रूचि थी तथा वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मुहम्मद इकबाल, कीटस एवं मिल्टन की कविताओं से बहुत प्रभावित थे।1

दिनकर जी का अधिकांश साहित्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है। चीन से युद्ध के दिनों में 'दिनकर' की 'परशुराम की प्रतीक्षा' कविता अत्यन्त प्रसिद्ध हुई। इस कविता में देश के सैनिकों को अहिंसा त्यागकर पौरूष बनने का आह्वान किया गया है। सन् 1962 के चीनी-भारतीय- युद्ध के समय कविवर 'दिनकर' ने 'परशुराम की प्रतीक्षा' कविता में देश के पौरुष को जागृत करते हुए सिंह गर्जना की थी।

वैराग्य छोड़ बाहों की विभा संभालो,
चट्टानों की छाती से दूध निकालों।
है रूकी जहाँ भी धार, शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चन्द्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।
चढ़ तुंग शैल शिखरों पर सोम पियो रे,
योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे।

- परशुराम की प्रतीक्षा

दिनकर ने मैथिलीशरण गुप्त के जयद्रथ-वध के अनुकरण पर ही 'प्रण-भंग' काव्य का निर्माण किया था और तब से लेकर आज तक दिनकर जी ने हुंकार, रसवंती, द्वन्द्व-गीत, रेणुका, सामधेनी, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, बापू, इतिहास के आँसू, सीपी और शंख आदि कितने ही काव्यों की रचना की है। उन्होंने अपने इन काव्य ग्रंथों में देश की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा आर्थिक समस्याओं के साथ देश की आजादी के लिए सामाज्यवादी ताकतों के विरुद्ध विद्रोह एवं क्रांति का सिंहनाद किया। दिनकर जी की रचना 'हुंकार' राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत रचना है। इसमें विद्रोह का बिगुल फूँका गया है। 'हुंकार' में वीर, श्रृंगार और करुण रस की सशक्त अभिव्यक्तित हुई है। 'हुंकार' का कवि क्रांतिकारी है किन्तु आतंकवार की धार में अपने को नहीं बहाता। हुंकार की समष्टि चेतना का दिनकर जी की काव्य-चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। दिनकर जी हुंकार की कविताएँ लेखन के साथ ही द्वन्द्वगीत और रसवंती की भी रचना कर रहे थे। ये तीनों कृतियाँ सन् 1936 में ही प्रकाशित हुई। रसवंती में दिनकर की काव्य चेतना का मधुर और कोमल रूप ही

प्रधान रूप से व्यक्त हुआ है। दिनकर की कविता संग्रह 'रेणुका' 1945 में प्रकाशित हुई। रेणुका की कविताओं में युग की क्रांतिकारी पुकार है जो अपने भुजबल से परतंत्रता की बेड़ी को तोड़ फेंकना चाहती है। सामधेनी कविता संग्रह में 1941 में 1946 तक की कविताएँ संकलित है। 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारंभ हो चुका था। 1942 में भारत में भारत छोड़ों का जन-आंदोलन फूट पड़ा। सामध ेनी की रचनाओं में दिनकर जी ने स्वाधीनता के महायज्ञ में सम्मिलित होने के लिए नवयुवकों का आह्वान किया।

यथा -'दहक रही मिट्टी स्वदेश की,
खौल रहा गंगा का पानी,
प्राचीरों में गरज रही है,
जंजीरों में काशी जवानी'[2]

1946-47 में पूर्वी बंगाल के भीषण सांप्रदायिक दंगे के अवसर पर गाँधी जी की नोआखोली यात्रा से प्रेरित होकर दिनकर ने 'बापू' कविता लिखी 1952 से लेकर 1963 तक की अवधि में उन्होंने सर्वाधिक ग्रंथों की रचना की। आजादी के बाद दिनकर जी द्वारा लिखे जाने वाले ग्रंथों के नाम हैं- रश्मिरथी, अर्द्धनारीश्वर, नीम के पत्ते ,धूप और धुआँ, तीन कुसुम, सीपी और शंख, नए सुभाशित उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, कोयला और कवित्व आदि। अन्य ग्रंथों की सूची इस प्रकार हैं- वेणुवन, देवी के फूल, उजली आग, चक्रवाद की भूमिका, राष्ट्र भाषा और राष्ट्रीय एकता, भारत की सांस्कृतिक एकता, संस्कृति के चार अध्याय, इतिहास के आँसू आदि।

राष्ट्रीय चेतना के काव्य रेणुका और हुंकार उनकी भाव-प्रवणा के ही परिणाम है। द्वन्द्वगीत और रसवंती में वैयक्तिक प्रतिक्रियों की अभिव्यक्ति हुई है। कुरुक्षेत्र में दिनकर जी विचारक और युग द्रष्टा के रूप में सामने आते हैं। परशुराम की प्रतीक्षा, बापू और सामधेनी में दिनकर जी के अग्निमय भाव बुद्धि को देखा जा सकता है। 'रेणुका' की समाजवादी भावना लोकतंत्र की विसंगतियों तथा असमानताओं के प्रति सचेष्ट करती है। 'रसवंती' की कोमल सुकुमार-भावना 'उर्वशी' के अध्यात्म दर्शन से विकसित हुई है। 'रश्मिरथी' द्विवेदी युगीन परंपरा का काव्य है। 'नील-कुसुम' का परिधान नई कविता की काव्य परंपरा से प्रभावित है।

दिनकर की राष्ट्रीय भावना पर जयशंकर प्रसाद के मानवतावादी राष्ट्रीय भावना का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। प्रसाद ने कामयनी में लिखा-

''औरो को हँसते देखो मनु!
हँसों और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो
सबको सुखी बनाओं।''[3]

दिनकर ने कुरुक्षेत्र में इसी भावना को कुछ इस प्रकार व्यक्त किया -

''दुर्लभ नहीं मनुज के हित
निज वैयक्तिक सुख पाना
किन्तु कठिन है कोटि-कोटि
मनुजों को सुखी बनाना''[4]

दिनकर हिन्दी साहिय के ऐसे हस्ताक्षर हैं जो अपने सम्पूर्ण रचना काल में नवयुवकों एवं वयस्कों में समान रूप से समाहित रहे। उनकी ओजस्वी भाषा-शैली, क्रान्ति और विद्रोह के स्वर प्रौढ़ विचार, गम्भीर चिन्तन तथा मौलिक दर्शन उनके काव्य की विशेषता है। बेनीपुरी जी के अनुसार- ''हमारे क्रान्ति युग का सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व इस समय दिनकर कर रहा है। क्रान्तिवादी को जिन-जिन हृदय मन्थनों से गुजरना होता है, दिनकर जी की कविता उसकी सच्ची तस्वीर रखती है।''[5]

1928 ई. में लाहौर कांग्रेस द्वारा पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पारित होने पर दिनकर ने उद्घोष किया-

''टुकड़े दिखा- दिखा करते क्यों मृगपति का अपमान
और मद-सत्ता के मतवालों, बनो यूँ नादान।''

दिनकर की 'हिमालय' रचना में 1931-32 ई. के राष्ट्रीय आन्दोलन के उपरान्त मुखरित, राष्ट्रीय भावना का स्वर गूँज उठा। नयी दिल्ली कविता में अंग्रेजी राज के प्रति असन्तोष व प्राचीन भारत के शौर्य के दर्शन होते हैं यथा-

आहें उठी दीन कृषकों की, मजदूरों की तड़प पुकारें।
अरे! गरीबी के लहू पर खड़ी हुई तेरी दीवारे।।

दिनकर की काव्य कृतियों में कुरुक्षेत्र का विशेष स्थान है। कवि ने कुरुक्षेत्र के युद्ध के कथानक के माध्यम से युग भावना को अभिव्यक्ति दी-

''रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ जाने दे उनको स्वर्ग धीर।
पर, फिरा हमें गाण्डीव-गदा लौटा दे अर्जुन, भीम वीर।''

स्पष्ट है कि दिनकर मानते थे कि राष्ट्र को भीम, अर्जुन जैस वीरों की आवश्यकता है जो अंग्रेजों के शोषण और अन्याय का दृढ़ता से प्रत्युत्तर दे सके। यही समय की माँग भी थी। सत्याग्रह के महायज्ञ में आहुति देने वालों में दिनकर भी थे। उन्होंने अपनी कृतियों के माध्यम से सत्याग्रहियों को प्रेरित किया, आश्वस्त किया

''दिशा दीप्त हो उठी, प्राप्त कर पुण्य प्रकाश तुम्हारा,
लिखा जा चुका अनल अक्षरों में इतिहास तुम्हारा,
जिस मिट्टी ने लहू पिया वह फूल खिलायेगी ही,
अम्बर पर धन वन छाएगा ही उच्छवास तुम्हारा।''

दिनकर की राष्ट्रीयता में अकर्मण्यता, भाग्यवाद, भाग्यवाद, सामाजिक-आर्थिक असमानता, संप्रदायिकता और ब्रह्मणवाद का विरोध दिखता है। दिनकर की राष्ट्रीयता में जितना कर्म के चितंन पर बल दिया गया है उतना ही व्यक्ति के स्वाभिमान पर। साथ ही साथ दिनकर जी असमानता पर आधारित उस सामाजिक व्यथा पर भी चोट करते हैं जिसमें लाख परिश्रम करने पर भी उसकी सूरत नहीं बदलती। कवि कहते हैं कितना अच्छा होता कि सभी लोग कर्मशील होते और सभी का जीवन खुशहाल होता। स्त्री, दलित, गरीब और किसानों के प्रति संवेदनशीलता उनकी राष्ट्रीय भावना की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक रूढ़ियों के खिलाफ दिनकर का काव्य मानवता का प्रतीक बनकर सामने आया है। हर प्रकार की अनीति, जड़ता, अमानवीयता और अन्याय के खिलाफ उनकी कविता विद्रोह करती रही है। आदमी और आदमी के बीच हर प्रकार के भेद का तिरस्कार, जाति, धर्म, लिंग , वर्ग, नस्ल और संप्रदाय क बंधनों का विरोध दिनकर की भावनात्मक राष्ट्रवाद को स्थापित करता है। शिव कुमार मिश्र के अनुसार-''देश के राष्ट्रीय एकात्म में जितना बाधक तत्त्व धर्म के आधार पर देश की जनता को संप्रदायो में बाटँता रहा है, उतना ही बाधक तत्त्व जाति के आधार पर आदमी और आदमी में फर्क करने, जाति के आधार पर रचा गया ऊँच-नीच का विधान है। इस विधान को हमारी सामाजिक संरचना के आधार बनाया गया है। 'रश्मि रथी'- आख्यान काव्य में दिनकर की चिंता के दायरे में हमारी सामाजिक संरचना की यही अमानवीयता है। इस काव्य में कर्ण के चरित्र के माध्यम से उन्होंने इस सामाजिक संरचना के विविधताओं की भेद-वृत्ति पर प्रहार किया है

मैं उनका आदर्श कहीं जो व्यथा न खोस सकेंगें,
पूछेगा जग किन्तु, पिता का नाम न बोल सकेंगें,
जिनका निखिल विश्व में कोई, कहीं न अपना होगा, मैं उनका आदर्श, किन्तु, जो तनिक न घबराएंगे, निज चरित्र-बल से समाज में पद विशिष्ट पाएंगे, सिंहासन ही नहीं, स्वर्ग भी, जिस देखना होगा, धर्म हेतु, धन-धाम लूटा देना जिनका व्रत होगा।[6]

दिनकर जी की सोच राष्ट्रवादी सोच है और स्वदेश गौरव तथा स्वाभिमान उनमें कूट-कूटकर भरा है। कवि गाँधी जी की विचारधारा से प्रभावित होने के कारण उनका राष्ट्रवाद और अधिक पुष्ट तथा मजबूत बन गया है, किन्तु वे अहिंसा में विश्वास न करते हुए हिंसा को मूल में रखते हुए कहते हैं- शांति और अहिंसा के सिद्धांतों को अपनाता है तो इससे उसकी कायरता ही उजागर होती है।

परशुराम की प्रतीक्षा सन् 1962 में भारत-चीन की पृष्ठभूमि पर लिखी गई वीरता तथा ओज से परिपूर्ण कविताओं का संग्रह है। उस समय कवि ने ओजमयी वाणी में इस आपद्धर्म को प्रकट किया है, जो किसी महान राष्ट्रवादी कवि रचनाकार के ही बूते की बात है। गाँधीवाद की उपासना में तत्कालीन सत्ता ने जिस मार्ग का आश्रय लिया कवि उससे संतुष्ट कैसे रह सकता है? अत: उसने यहाँ के वीरों को परशुराम के रूप में देखा तथा कवि ने गाँधीवादी अहिंसा को त्यागकर परशुराम की तरह धर्म और जाति की रक्षा के लिए शस्त्र ग्रहण करन का अनुरोध किया-

''चितंको ! चिंतना की तलवार गढ़ो रे!
ऋषियों! कृशान, उद्दीपन मंत्र पढ़ो रे!
योगियों! जगो, जीवन की ओर बढ़ो रे
बंदूकों पर अपना आलोक मढ़ो रे।''

दिनकर ने सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय रूप से विभिन्न महत्त्वपूर्ण विषयों पर लिखकर हिंदी साहित्य को अत्यधिक समृद्ध बनाया है। वह आसान रास्तों तथा सरल जीवन में विश्वास नहीं रखते थे तथा उन्होंने अपने

पाठकों को चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रेरित किया तथा उन्हें अपनी चेतना का विकास कर साहस एवं इस दृढ़ विश्वास के साथ आगे बढ़ने को प्रेरित किया कि बुराई एवं अत्याचार पर अच्छाई की जीत होगी।[7]

दिनकर की राष्ट्रीय अवधारणा में एक ओर देश के प्रति प्रेम और सम्मान का भाव है, वहीं दूसरी ओर मानव मात्र के लिए स्वतन्त्रता, समानता व स्वाभिमान की आकांक्षा भी परिलक्षित होती है, जिसकी वर्तमान में महत्ती आवश्यकता है। स्वतन्त्र भाव से समान साझेदारी के साथ उन्मुक्त जीवन जीने की प्रेरणा देती ये पंक्तियाँ। राष्ट्रीय उद्घोष का सार हैं। कानो कानो को सही नहीं, चुनके चुपके, छिप आह न भर, तू बोल, सोचता है जो कुछ, पहरों की टुक, परवाह न कर, अब नहीं गाँव में भिक्षु और दिल्ली में कोई दानी है, तू दास किसी का नहीं स्वयं, स्वाधीन देश का प्राणी है।[8]

निष्कर्ष:

दिनकर के काव्य का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि उनका काव्य राष्ट्रीय चेतनाओं से परिपूर्ण है। कवि ने शुरुआत ही राष्ट्रीय चेतना से सम्बन्धित काव्य से की है तथा अलग-अलग संदर्भों में राष्ट्रीय चेतना को अपने काव्य में दर्शाया है। कवि दिनकर ने अपने युग का प्रतिनिधित्व अपने काव्य में किया है। दिनकर की सोच राष्ट्रवादी सोच है और स्वदेश गौरव तथा स्वाभिमान उनमें कूट-कूटकर भरा है, कवि गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित है किन्तु वे अहिंसा के बल पर नहीं बल्कि हिंसा के बल पर देश को आजाद कराना चाहते हैं। कवि स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सभी कुछ न्योछावर कर देने तथा स्वयं को बलिदान कर देने की भावना को प्रोत्साहित करते हैं। वस्तुत: कविवर 'दिनकर' संवेदनशील कवि हैं। उनका अधिकांष साहित्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है। उन्होने सामाजिक उत्थान-पतन और आंदोलन से प्रभावित होकर काव्य-सृजन किया है। देश पर जब-जब संकट के बादल घिरते हैं, मानव-जीवन संघर्ष में जूझने लगता है, तब तब 'दिनकर' की कविता जन-मानस में ऊर्जा का संचार करती है। उनकी कविता देश की संस्कृति, सभ्यता, भाषा, परम्परा और आदर्श आदि की अनूठी एकता की आधारभूमि प्रस्तुत करती है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची:

1. प्रो. रामधारी सिंह 'दिनकर' लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली।
2. सामधेनी, कविता, 'दिल्ली और मास्को' - रामधारी सिंह दिनकर, कविता कोश, kavitkosh.org
3. कामायनी, कर्म सर्ग, भाग-2 जयशंकर प्रसाद, हिंदी समय, hindisamay.com
4. कुरुक्षेत्र- रामधारी सिंह दिनकर, राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण : 2004, पृष्ठ सं0 89
5. हुँकार की भूमिका, क्रान्ति का कवि, रामवृक्ष बेनीपुर, पृ. सं.- 02
6. साहित्य, इतिहास और संस्कृति-शिवकुमार मिश्र, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण: प्रथम पृष्ठ सं0 162
7. पद्मावती, श्रीमती एस.के. 1967, कवि दिनकर: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा
8. कुरुक्षेत्र, पृ.सं.- 87